छायावाद

परिभाषा :-

शुरू-शुरू में ही आलोचकों ने छायावाद पर रहस्य की ऐसी झिलमिल चादर ओढ़ा दी कि इसे समझने के लिए हर बड़े आलोचक को छायावाद की परिभाषा देनी पड़ी। सबसे पहले मुकुटधर पाण्डे ने जबलपुर से निकलने वाली पत्रिका 'श्री शारदा' में छायावाद पर निबंध लिखा। उन्होंने कहा कि "छायावाद एक मायामय वस्तु है जिसका ठीक-ठीक अर्थ करना असंभव है। ऐसी रचनाओं में शब्द अपना वास्तविक अर्थ खोकर सांकेतिक चिह्न मात्र हुआ करता है....... उसमें एक प्रकार की उन्मादकता और आवेगमयता मिलती है जिसका संबंध कवि के अन्तर्जगत् से है यह अंतरंग दृष्टि ही छायावाद की विचित्र प्रकाशन रीति है ...... इसमें चित्र प्रकृत वस्तु का ही उतारा जाता है...... इसमें कवितादेवी की आँखें सदैव ऊपर उठी रहती हैं।" मुकुटधर पाण्डे ने लाक्षणिकता, अंतरंगता, विचित्र प्रकाशन रीति, कल्पनाशीलता को छायावाद की विशेषताओं के रूप में चिह्नित किया।

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने टो-टाकर छायावाद को अन्योक्ति पद्धति रूप में समझा। वे कहते हैं कि "यदि कविता के भाव की छाया कहीं अन्यत्र पड़े तो उसे छायावादी कविता समझना चाहिए।" द्विवेदीजी ने छायावाद को रहस्यवाद समझने की भूल तो नहीं की लेकिन उसे लाक्षणिकता और अन्योक्ति पद्धति के रूप में अवश्य पहचाना।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की छायावाद संबंधी धारणा बहुत विवादास्पद है। शुक्लजी के अनुसार विषयवस्तु के रूप में रहस्यवाद है और शैली

के रूप में लाक्षणिक शैली मात्र। शुक्ल जी छायावाद को पश्चिम का रोग मानते थे। उनके अनुसार यह छायावाद ईसाई धर्म, ब्राह्म समाज और ब्राह्म समाज से टैगोर की कविता और उससे हिन्दी कविता में आया। शुक्लजी ने ईसाई धर्म में छाया अर्थ देने वाला 'फैंटस मेटा' शब्द भी ढूँढ लिया और बताया कि छायावाद हमारे जमीन की उपज नहीं है यह बाहरी प्रभाव है। आज कोई भी आलोचक शुक्लजी से पूर्णतः सहमत नहीं होगा।

आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने छायावाद की परिभाषा देते हुए कहा, "मानव अथवा प्रकृति के व्यक्त किन्तु सूक्ष्म सौन्दर्य में आध्यात्मिक छाया का भान मेरी दृष्टि में छायावाद की सर्वश्रेष्ठ व्याख्या है।" यहाँ वाजपेयीजी ने माना कि छायावाद का संबंध आध्यात्मिकता से है और इसके कारण ही कविता एक अन्य अर्थ संकेतित करती है।

डॉ० नगेन्द्र की परिभाषा छात्रों में बहुत लोकप्रिय है। वे कहते हैं कि "छायावाद स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह है।" इस

परिभाषा पर Romantic revolt against Classicism का प्रभाव अनुभव किया जा सकता है।

डॉ० नामवर सिंह के अनुसार "छायावाद उस सांस्कृतिक जागरण की साहित्यिक अभिव्यक्ति है जो एक ओर सामाजिक रूढ़ियों के विरुद्ध था दूसरी ओर राष्ट्रीय पराधीनता के। निश्चय ही यह छायावादी कविता बंदिशों के विरुद्ध एक विद्रोह है चाहे वे बंदिशें काव्य रूढ़ियों की हो या सामाजिक

रूढ़ियों की ; चाहे सामाजिक शासन की हो या राजनीतिक पराधीनता की। इसलिए 1916-18 से लेकर 1936 तक की जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, सुमित्रानंदन पंत और महादेवी वर्मा की सारी कवितायें छायावादी कविता है।

छायावाद की विशेषतायें :-

(1) आत्माभिव्यक्ति :-

आत्माभिव्यक्ति अर्थात 'मैं' शैली। छायावादी काव्य आन्दोलन की 'मैं' शैली व्यक्तिवादी प्रवृत्ति है जो पूँजीवाद, औद्योगीकरण और नवजागरण आन्दोलन से विकसित हुई थी। गाँधीजी ~~अन्तश्चेतना~~ अंतरात्मा की आवाज को बहुत महत्त्व देते थे। वे मानते थे कि एक व्यक्ति भी आर्थिक, राजनीतिक परिवर्तन लाने में समर्थ है। टैगोर के अनुसार व्यक्ति नियमों से नहीं चलता अपनी ~~अन्तर्चेतना~~ अंतरात्मा से अनुशासित होता है। छायावादी कविता, यह वैयक्तिक यूरोपीय रोमैंटिसिज्म का प्रभाव नहीं है, वह युग की ही आवाज है।

छायावादी कवियों ने परंपरागत निर्वैयक्तिकता, रूढ़, जड़ सामाजिकता का आवरण उतार दिया क्योंकि उसमें आत्मनिषेध का खतरा था। ये कवि अपनी बात कहने के लिए किसी ओट या परदे के उपयोग के विरुद्ध थे। इसलिए इन्होंने परंपरागत और सुरक्षित 'अन्य पुरुष' शैली को छोड़कर 'मैं' शैली अपनायी। निराला कहते हैं:- 'मैंने 'मैं' शैली अपनायी
देखा एक दुखी जनभाई।'

यह 'मैं' शैली आत्मीय लगाव की शैली है। यह पाठक और कवि के बीच सीधा संवाद बनाती है। अपने वर्ण्य विषय में सीधे हस्तक्षेप की शैली है। इसमें कवि के लिए तटस्थ रहने का अवकाश नहीं है। निराला भिक्षुक को देखकर कहते हैं:- 'अहा। मेरे हृदय में है अमृत/ मैं तुम्हें सींच दूंगा/

Scanned with CamScanner

'अभिमन्यु जैसे हो सकोगे तुम / तुम्हारे दुःख अपने हृदय में खींच लूँगा मैं।' यहाँ निराला भिक्षुक सीधे भिक्षुक वर्ग के साथ अपनी वर्गबद्धता घोषित करते हैं। आत्माभिव्यक्ति की ऊष्मा का एहसास पहले-पहल भक्त कवियों के ~~साथ अपनी वर्गबद्धता~~ आत्मनिवेदनों में हुआ जब तुलसी, सूर आदि ने आध्यात्मिकता के आवरण को हटाकर सीधे-सीधे ईश्वर से संवाद बनाया। छायावादी कवियों ने छायावादी मानवों की घुटन का एहसास किया। पाया कि जड़ पारिवारिकता या सामूहिकता में उसका वैयक्तिक विकास बाधित है। इसलिए छायावादी मानव ने आत्माभिव्यक्ति के जरिए उस जड़ पारिवारिकता या सामूहिकता का विरोध किया। आत्माभिव्यक्ति की यह कोशिश स्वतंत्रता के लिए बढ़ा हुआ पहला कदम है। सबसे पहले कवियों ने प्रेमाभिव्यक्ति की छूट ली। पंत ने 'पर्वत प्रदेश में पावस' शीर्षक कविता में निःसंकोच भाव से कहा: 'वह बालिका मेरी मनोरम मित्र थी'। 'ग्रंथि' में तो उन्होंने अपनी भावी पत्नी का पूरा खाका ही खींचकर रख दिया। प्रेम के क्षेत्र में इस स्वतंत्रता का स्वाद जब कवियों ने चखा तो दूसरे क्षेत्रों में भी पहल शुरु हो गयी। निराला ने तो 'सरोज स्मृति' में अपनी पुत्री की मौत पर अपनी आर्थिक पराजय, साहित्यिक संघर्ष की पूरी गाथा ही कह दी। 'वनबेला' में उन्होंने स्वीकार किया 'व्यर्थ हो गया जीवन मैं रण में गया हार'। जिसतरह गाँधी एवं रूसो की आत्मकथा में ईमानदार ~~कोस~~ आत्माभिव्यक्ति है अपनी कमजोरियों को भी खोलकर रखने का साहस है कुछ वैसी ईमानदार और साहसिक आत्माभिव्यक्ति निराला की कविताओं में दिखी। इससे पाठकों ने अन्यों की तुलना में निकटता का इनमें

कुछ अधिक अनुभव किया। प्रसादजी संकोची रहे लेकिन 'हंस' के आत्मकथा विशेषांक में उन्होंने अपना खालीपन छिपाया नहीं, कहा: 'सुनकर सुख पाओगे देखोगे ये गागर रीति;' (रीती) (खाली) महादेवीजी भले ही आत्मकथनों पर रहस्य का परदा आच्छादित करती हैं लेकिन उनके गीत उनकी अपनी ही ~~विरह~~ वेदना की अभिव्यक्ति है। उनके इस कथन में व्यक्तिवाद झाँकता है "आज का प्रत्येक साहित्यकार अपनी हर साँस का इतिहास लिख लेना चाहता है।" यदि इस छायावाद युग में महान पुरुषों ने अपनी आत्मकथायें लिखी तो इन्हें आत्माभिव्यक्ति की उनकी तड़प के ही रूप में देखा जाना चाहिए। आत्मकथा वही लिखता है जो मानता है कि उसके पास कहने के लिए कुछ विशिष्ट है। अपनी महत्ता और विशिष्टता का बोध ही व्यक्तिवाद है।